Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor:3.021 website: www.researchguru.net
Volume-12, Issue-1, June-2018

उत्तराखण्ड की पिछड़ी आदिम जनजाति–राजी (वनरौत): एक अध्ययन (ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक सन्दर्भ में)

डा0 दीपक कुमार

असि0 प्रोफेसर (इतिहास विभाग)बी0एस0एम0 पी0जी0 कालेज,
रूड़की (हरिद्वार) उत्तराखण्डए email-deepakdobhalrke@gmail.com

सारांश: (Abstract) – भारत के उत्तरी सीमान्त क्षेत्र में अवस्थित प्रदे"ा उत्तराखण्ड प्राचीन अथवा पौराणिक काल से ही अपनी प्राकृतिक सौन्दर्यता एवं आध्यात्मिक वातावरण के लिये सुप्रसिद्व रहा है। यहाँ के हरे–भरे वन क्षेत्र एवं हिमालय की बहती हुई नदियों ने प्रारम्भ से ही अनेक मानव जातियों को अपनी ओर आकर्षित किया है। यहाँ के राजव"ाों के विवरणों, संस्कृत एवं बौद्व साहित्यों में प्राचीन मानव जातियों का विवरण मिलता है। इसी परिप्रेक्ष्य में जनपद पिथौरागढ़ के समीपवर्ती गाँव में सदियों से निवास करने वाली राजी या बनरावत जनजाति है। इस जनजाति को उत्तराखण्ड की अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में सम्मिलित किया गया है। इनकी अपनी सामाजिक, सांस्कृतिक परम्परायें एवं मान्यताएँ रही है जो कि गैर जनजाति समाज से एकदम अलग–थलग एवं भिन्न है। अतः इनका अध्ययन समाज"ाास्त्रियों एवं इतिहासकारों के लिये भी अति वि"ाष्ट रहा है। प्रस्तुत शोधपत्र में इनकी सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक गतिविधियों का विस्तृत विवेचन किया गया है।

सारशब्द (Key Word) :– राज किरात, राजघराना, वनरौत, रौत्युड़ा, मंगोलियन, कुन्वा, पितृसत्तात्मक, काष्ठकला आदि।

प्रस्तावना– सर्वाधिक पिछड़ी एवं आदिम जनजाति राजी या बनरौत उत्तराखण्ड के सीमान्त जनपद पिथौरागढ़ के दारचुला, डीडीहाट एवं चम्पावत तहसील क्षेत्र के भिकतिरूआ, चिफलतड़ा, गया (गैना) गाँव, किमखोला, आल्तड़ी, कुटाचौरानी, कन्तौली, मदनबोरी एवं खिरद्वारी आदि गाँवों में निवास कर रही हैं। प्रारंभ में यह जनजाति जंगलों एंव गुफाओं में रहकर खानाबदोष जीवन यापन करती थी। जंगलों में ही उगने वाले कन्दमूल फल–फूल एवं जंगली जानवरों का शिकार करके अपना पेट भरती थीं। डी0एन0 मजूमदार (1949:149) के अनुसार[1]'' बीसवीं सदी के पचास के दशक तक अल्मोड़ा एवं अस्कोट के क्षेत्र में राजीयों (वनरौतो) के अस्थायी आवास थे।उसी क्षेत्र के जंगलों में रहकर भोज्य पदार्थों की तलाश में इधर–उधर धुमते रहते थे।'' डॉ0 वी0एस0 बिष्ट के अनुसार "आज भी राजी झुण्ड या समूह बनाकर जंगलों में भोज्य पदार्थो की तलाश के लिए जाते रहते हैं"।[2] आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से अत्यधिक पिछड़ी जाति होने के कारण सरकार द्वारा इसे 1965 'आदिम जनजाति' तथा वर्ष 1967 में 'अनुसूचित जनजाति' का दर्जा देकर विकास की धारा से जोड़ने का प्रयास किया। वर्तमान में राजी जनजाति के लोग पिथौरागढ़ जिले के नौ गाँवों में स्थायी रूप से रह रहे हैं। इनकी अनुमानित

जनसंख्या आठ सौ तक है।

राजी या वनरौत की उत्पति के सम्बन्ध में विद्वानों एवं लेखकों के अनेक मत हैं। शिवप्रसाद डबराल के अनुसार[3] "राजी या वनरौत कुमाऊँ के हिमालयी क्षेत्र में सदियों से निवास करने वाली जाति है। अस्कोट में यह जाति वनरौत या 'राजकिरात' नाम से जानी जाती है। राजी स्वयं को अस्कोट राजघराने से जोड़कर उसका रक्त मिश्रण बताते हैं"।

शेरिंग सी0ए0 ने भी कुमाऊँ क्षेत्र में रहने वाले राजीयों को ''किरातवंशी'' माना है।[4] भू–देव एवं बालेश्वर के अभिलेखों में दसवीं शताब्दी में उत्तराखण्ड के पूर्वी भाग में किरात राजकुमारों के शासन का वर्णन मिलता है। इन ऐतिहासिक तथ्यों से सिद्ध होता है कि अतीत काल से इन जनजातियों को उत्तराखण्ड में शासन करने के प्रमाण मिलते हैं। लेकिन इस क्षेत्र में अन्य आक्रमणकारी जातियों ने पहुँचकर राजकिरातों को जंगल की ओर भगा दिया। जिसके कारण इन्हे जंगली जीवन यापन करना पड़ा।

राहुल सांस्कृत्यायन ने भाषा वैज्ञानिक आधार पर राजी या वनरौतों को 'किरातीय' पृष्ठभूमि का बतलाया है।[5] इनमें तिब्बती एवं संस्कृत भाषाओं, बोलियों का समावेश है। जनपद पिथौरागढ़ में निवास करने के कारण राजीयों में कुमाऊँनी एवं शौका (भोटिया) बोलियों का प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है। वे घी को 'घिड', दस को 'दख', माँस को 'स्या' पीने के लिए 'तुड़' एवं माँ को 'ईजा' कहकर पुकारते हैं। अतः भाषा विज्ञान की आधार पर राजियों में 'किरातीं बोली' के प्रमाण प्राप्त हैं। डी0एन0मजूमदार ने राजी या वनरौतों को मंगोल प्रजाति की शारीरिक विशेषताओं से जोड़ा है।

डॉ0वी0एस0 बिष्ट के अनुसार ''राजीयों में मंगोल प्रजाति की शारीरिक विशेषताओं का सर्वथा अभाव है। आज वनरौतों का रंग गेहुँआ, औसत ऊँचाई, हल्का लम्बा गोल सा चेहरा, मध्य ऊँचाई, पतला छरहरा बदन, मध्यम आकार की नाक, छोटी आँखे जो कि स्थानीय जनजातियों एवं निम्न हिन्दू जातियों से काफी समानता रखती हैं। लेकिन मंगोल जाति के लक्षणों से मेल नहीं खाती हैं। जिससे प्रतीत होता है कि विभिन्न मानव जातिय समूहों के घालमेल के कारण ''वनरौत'' की मूल प्रजातिय विशेषताएँ विलुप्त हो गयी। सामान्यतः शारीरिक विशेषताओं के आधार पर इन्हें आर्य–द्रविड़ एवं मंगोल जातियों के मिश्रण में देखा जाता है।[6]

समाज एवं जनजीवन–

राजी जनजाति उत्तराखण्ड के दारचुला, डीडीहाट एवं चम्पावत विकासखण्डों के दस गाँवों में प्रारम्भ से ही निवास करती आ रही हैं। इनके निवास स्थान को ''रौत्यूड़ा'' कहा जाता है। इनमें प्रमुख रूप से पाँच धड़े अस्कोटी पाल, डिन्सीपाल, बैतड़ा, ऐरी, क्वैनतला आदि हैं। यह अपने को सर्वोच्च वर्ण का क्षत्रीय मानते हैं।[7] प्रारम्भ से अभी तक भी कुछ राजी परिवार गुफाओं एवं झोपड़ीयों में निवास करते हैं। इनमें एंकाकी परिवार व्यवस्था देखने को मिलती है। जिसमें पति–पत्नी एवं उनके दो या चार बच्चे तक रहते हैं। परिवार को स्थानीय बोली में ''कुन्वा'' कहा जाता है। जगह की कमी एवं कमजोर आर्थिक स्थिति के होते हुए संयुक्त परिवार विघटित हो जाते हैं। विवाह के बाद

नव–दम्पति अपने मूल परिवार से हटकर अलग झोपड़ी (नाँऊ) बनाकर रहने लग जाते हैं। जिसमें पति–पत्नी आजीवन साथ रहकर अपने बच्चों का पालन–पोषण करते हैं। राजी पितृसत्तामक समाज होने के कारण पुरूष के आदेशानुसार ही पारिवारिक निर्णय होते हैं। लेकिन स्त्री को भी विशेष सम्मान देकर उसकी राय के अनुसार भी विशेष परिस्थितियों में निर्णय लेने का अधिकार दिया जाता है।

डॉ0 प्रयाग दत्त जोशी के अनुसार "राजीयों की सात उपजातियाँ है। जिनमें घाकोटी, टकाल, वरैत, पत्थाल, पंचपइंया, बारपतली एवं गलटुआर आदि, इनमें घाकोटी सर्वश्रेष्ठ माने जाते हैं। ये स्वयं को हिन्दू श्रेष्ठ राजपूत जाति से जोड़ते हैं"।[8] राजी अपनी स्त्रियों को धार्मिक कृत्यों, त्यौहारों एवं विवाह के अवसरों पर विशेष सम्मान के साथ सभी कार्यों की जिम्मेदारी सौपतें हैं। यहाँ की स्त्रियों का कार्य परिवार का खाना बनाना, बच्चों का पालन–पोषण करना एवं जंगल से लकड़ी, घास आदि लाना होता है। पुरूष मजदूरी का कार्य करने के लिए अन्य गाँवों में चले जाते हैं। जहाँ से प्राप्त आय से अपने परिवार का भरण–पोषण करते रहते हैं।

राजी जनजाति प्रारंभ से ही घुमन्तु या एक स्थान से उठकर दूसरे स्थान में बसने के वाली प्रवृति की जाति रही है। जिस कारण आज भी इनका आर्थिक एवं सामाजिक विकास नहीं हो पाया है। आज भी ये गुफाओं या झोपड़ियों के अलावा कुछ गाँवों में मिट्टी–पत्थर से बने मकानों में रहने लगे हैं। जैसे किमखोला, मदनपुरी एवं खिरद्वारी आदि हैं। राजी सरल, सज्जन स्वभाव के होते हैं आज भी किसी बाहरी व्यक्ति के पहुँचने पर ये डरकर मकान या झोपड़ियों में छिप जाते हैं। परिचय देने पर ही ये मिलने के लिए बाहर आते हैं।

राजी या वनरौत एक वनवासी जाति रही है। इनके पूर्वज जंगलों में ही निवास करते थे। जंगली पेड़ों की पत्तीयों एवं छाल से अपना शरीर ढकते थे। लेकिन वर्तमान में पुरूष कुर्ता, सलवार, कमीज, पैन्ट एवं टोपी एवं स्त्रियाँ धोती, बिलाउज, पेटीकोट, एवं स्वेटर पहनती हैं। इनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण ये आसपास के गैरजनजातिय समाज से कपड़े मांगकर लाते हैं। इन फटे, पुराने कपड़ों से अपने शरीर को सर्दी–गर्मी से बचाते हैं। कुछ राजी परिवार जो कि मजदूरी से प्राप्त धन से सस्ते कपड़े पिथौरागढ़ एवं जौलजीवी बाजार से खरीदकर पहनते हैं।

स्त्रियाँ आभूषणों में चाँदी के गहने पहनती हैं। जिसमें नाक की नथ, फूली, गले में मूंगे की माला या चाँदी का मंगल सूत्र, हाथ की अंगुलियों में अंगूठी, पैरों में विछुआ व पायजेब आदि धारण करती हैं। सुहागन महिलाएँ नाक में फूली, छोटी नथ एवं माथे पर बिन्दी लगाती हैं। आजकल बाजार में बिकने वाले सस्ते कृत्रिम आभूषणों को भी बड़े शौक से महिलाएँ पहनने लगी हैं।

राजी जनजाति जंगलों एवं गुफाओं में जीवन यापन करने के कारण आज भी इनका भोजन जंगली कन्दमूल फल प्रमुख हैं। ये जंगली कन्द, तरूड़, गेंठी, सिंधा को उबालकर खाते हैं। इसके अलावा जंगली पशु सुअर, खरगोश हिरण एवं वन्य पक्षियों का शिकार करते हैं। खेतों में उगने वाले अनाज चावल, दाल गेहूँ, जौ, फॉफड़ व उड़द

आदि को पकाकर भोजन तैयार करते हैं। अपने घरों के पास आम, केला, अमरूद नीबूं आदि फलदार वृक्ष लगाकर रखते हैं। सब्जियों में मूली, राई तोरी, कद्दू की सब्जियाँ बनाकर खाते हैं। वर्तमान में आस–पास के लोगों के सम्पर्क में आकर शराब का सेवन भी करने लगे हैं। जिससे वनराजी (राजी) समाज में निर्धनता एवं सामाजिक बुराई को बढ़ावा मिल रहा है। राजीयों को खान–पान का उचित ज्ञान न होनें के कारण कई बार जंगली विषैले–कन्दमूल फल खाने से इनकी मृत्यु हो जाती है। जिस कारण आज भी राजी समुदाय में मृत्यु दर अधिक है।

राजी या वनरावत समुदाय की अपनी अलग बोली–भाषा है। जिसे अन्य समुदाय के लोग बिल्कुल नहीं समझ पाते हैं। जंगलों में निवास होनें के कारण इनकी बोली में जंगली जीव–जन्तुओं, पक्षियों की लय व आवाज झलकती है। आपस में राजी गुप्त बातों को पक्षीयों एवं वन्य जीवो की लय व आवाज निकालकर बतलाते हैं। इसके अलावा राजी कुमाऊँनी एवं हिन्दी भाषा बोली में भी बाते करते रहते हैं। ये पिता के लिए 'बा', माता के लिए 'ईजा', रोटी के लिए 'रवट', खाना के लिए 'खाण', जाना के लिए 'जाण' आदि से सम्बोधित करते रहते हैं जो कि कुमाऊँनी भाषा–बोली से काफी मेल खाते हैं। ये माँस के लिए 'स्या', पीने के लिए 'तुड़' का सम्बोधन करते हैं जो कि शौका बोली–भाषा से मिलती है। राजीयों में कुमाऊँनी एवं शौका बोली–भाषा के शब्दों का समावेश सुनने को मिलता है। अतः इनकी बोली पर तिब्बती, बर्मी भाषा एवं मध्य पहाड़ी बोली का प्रभाव दृष्टिगोचर होता है।

आस्थाएं एवं लोक मान्यतायें–

राजी या वनरौत प्रारम्भ से ही वनों एवं गुफाओं में निवास करने वाली जाति रही हैं। ये प्रकृति की अदृश्य शक्तियों, प्रेत–आत्माओं एवं देवी–देवताओं पर विश्वास एवं आस्था रखते हैं। इनके ईष्ट देवताओं में छुरमल, भलेनाथ, गणेनाथ, हुनशिखर, मणिनाथ, खोलिया, छियुला व मालिकार्जुन प्रमुख हैं।[10] ये विशेष पर्वों एवं त्यौहारों पर इन देवताओं के नाम का 'रोट' काटकर पूजते हैं। प्रत्येक राजी गाँव में भूमिया देवता का स्थान पत्थरों से चिनकर एक छोटा सा मन्दिर बना होता है। अन्य हिन्दू मन्दिरों की तरह देवता का 'थान' (स्थान) पीपल, बरगद या पाईयाँ वृक्षों की घनी छाया के नीचे बना होता है। मन्दिर में देवता के प्रतीक पत्थर की प्रतिमाऐं रखी जाती है। जहाँ पर विशेष त्यौहारों के अवसरों पर घण्टियाँ एवं झण्ड़े चढ़ाये जाते हैं। नयी फसल के पकने पर सर्वप्रथम गेहूँ से बना 'रोट' धूप, अक्षत (चावल) चढ़ाकर पूजन किया जाता है। भुमिया देवता के बारे में मान्यता है कि यह देवता फसलों तथा पशुओं की रक्षा करता रहता है।

हुनशिखर राजीयों का श्रेष्ठ देवता है। जो कि ऊँचे पर्वतों में निवास करता है। यह देवता भूत–प्रेत, दैवीय आपदाओं एवं अदृश्य शक्तियों के प्रकोप से रक्षा करता है। हुनशिखर देवता की पूजा सफेद बकरे की बलि देकर सम्पन्न की जाती है। इसके अतिरिक्त राजीयों में हिन्दुओं के देवी–देवता, शिव–पार्वती, काली, लक्ष्मी, दुर्गा, नन्दादेवी आदि के प्रति पूर्ण अटूट आस्था एवं विश्वास देखने को मिलता है। ये नंदाष्टमी एवं घ्यूतार (घी संक्रन्ति) आदि पर्वो पर देवी देवताओं का पूजन एवं नृत्य–गान करते रहते

हैं। दीपावली के दिन बाजार से मिठाई एवं गृह उपयोग की वस्तुएं लाकर राजी घर पर दीपक (दिया) जलाकर त्यौहार का आनन्द लेते हैं। राजी सामान्यतः हिन्दू–तीज–त्यौहारों में आस्था रखते हैं। इनका अपना कोई निजी मेला एवं त्यौहार नहीं होता है। उनके क्षेत्र में नाजुरकोट और जौलजीवी का प्रसिद्ध मेला होता है। कुमाऊँनी समाज में प्रचलित घुघुतिया (घी सक्रन्ति) को राजी मनाते हैं। इनकी अपनी भाषा के गीत न होने से ये कुमाऊँनी एवं नेपाली गीतों को गाते रहते हैं।''[12]

राजी जनजाति में भूत–प्रेतों तथा प्रकृति की अदृश्य शक्तियों का भय बना रहता है। इस अंधविश्वासी मान्यता के चलते राजी इन शक्तियों को खुश रखने के लिए बलि का सहारा लेते हैं। ये भूत–प्रेत, छल–कपट एवं घात पर विश्वास करते हैं। जब कोई व्यक्ति बीमार हो जाता है तो ये जंगली जड़ी–बूटियाँ मंत्र करके दवा बनाकर रोगी को खिलाते हैं। यह परम्परागत चिकित्सा प्रणाली इनके वन्य जीवन का परिचय दिलाती है। कभी अचानक किसी व्यक्ति को चक्कर आ जाना, मुँह से बेहोशी में झाग निकलना, हवा का प्रकोप, अचानक नाचना या चिल्लाना जैसी हरकतें होने पर तन्त्र या झाड़–फूंक से ठीक करने का प्रयास किया करते हैं। भूत–प्रेत आत्माओं को शान्त करने के लिए मुर्गे की बलि चढ़ाने की प्रथा है। बुरीनजर से बचने के लिए मंत्र करके पीतल या ताबें का कड़ा पहनकर रखते हैं। राह में चलते समय किसी व्यक्ति का छींकना, बिल्ली का रास्ता काटना, आँख फड़फडाना राजी लोग अशुभ संकेत मानते हैं। इन अशुभ सूचक लक्षणों के कुप्रभाव से बचने के लिए तन्त्र–मन्त्र का सहारा लेकर मन की शान्ति करते हैं। किसी विरोधी व्यक्ति द्वारा मारपीट या अनिष्ठ क्रियाकलापों के निराकरण के लिए राजी 'घात' पर विश्वास करते हैं। वे आपस में झगड़ा हो जाने पर देवता के मन्दिर 'थान' में पहुँचकर अपने विरोधी व्यक्ति का नाम लेकर रो–रोकर दृःखी मन से उसके किये कुकृत्यों का वर्णन करते हुए न्याय की गुहार–कामना करते हैं। आज भी पुरानी मान्यताओं एवं रूढ़ीवादी परम्पराओं से जुड़े व्यक्ति तन्त्र–मन्त्र या जादू का सहारा लेते हैं। लेकिन युवा पीढ़ी में बाह्य समाज के सम्पर्क में आने से शिक्षित होकर अंधविश्वासी मान्यताओं से दूर होते जा रहे हैं। वे त्रान्त्रिक के पास न जाकर रोगी व्यक्ति का उपचार डॉक्टर से करवाकर आधुनिक सामाजिक मान्यताओं एवं परम्पराओं से जुड़ने लगे हैं।

राजी अर्थव्यवस्था

राजी जनजाति आर्थिक रूप से अत्यन्त पिछड़ी जाति रही है। इनके गुफावासी एवं खानावदोष जीवन शैली ने इन्हें बाह्य जगत से अनभिज्ञ रखा। जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं के चलते हुए आर्थिक पक्ष की ओर पहले से ही कोई ध्यान नहीं दिया। जब ये लोग गुफाओं एवं जंगलों से निकलकर बाहर आये तो धीरे–धीरे अपने दैनिक जीवन में काम आने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए कृषि, पशुपालन एवं छोटे–मोटे उद्योग धन्धे अपनाने लगे। आज वनरावत या राजी गेठी या सानन की ठोस लकड़ी से दैनिक उपयोग की वस्तुएँ दूध जमाने की ठेकी, पल्ला, घी रखने के लिए चौंठा, दही मथने का बिंडा एवं अनाज मापने के लिए पाली (पाथा) का निर्माण करने लगे।

लगभग पचास–साठ के दशक में राजी लकड़ी के वर्तन बनाकर अजनजातिय पड़ोसी सम्पन्न गाँव में शाम के समय जाकर उनकी दहलीज पर रखकर वापस आ जाते थे। दूसरे दिन जाकर उनके बदले अनाज ले आते थे।[13] धीरे–धीरे ये कृषि उपकरण कुदाल, हल, जुआ, रस्सी, हँसिया तथा फावड़े हत्थे बनाने का कार्य करने लगे। इन उपकरणों के बदले वे कपड़े तथा मोटा अनाज लेकर अपना गुजर–बसर करने लगे। वर्तमान में राजी आस–पास के गाँवों में जाकर लकड़ी का चिरान, दरवाजों की चौखट बनाने एवं मकान निर्माण में मजदूरी का कार्य करने लगे हैं। ये समीपवर्ती नेपाल के गाँवों में जाकर भवन निमार्ण के कार्यो से जुड़कर मजदूरी से अपने परिवार की घरेलु आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। राजी महिलाएं भी जंगल से लकड़ी का गठ्ठर लाकर जौलजीवी बाजार में बेचने के लिए जाती हैं। खिरद्वारी एवं किमखोला गाँव के कुछ व्यक्ति सरकारी नौकरियाँ भी करने लगे हैं। राजी जनजाति विधायक गगन सिंह रजवार के गाँव की दो महिलाएँ फुन्ना देवी एवं चन्द्रा देवी ''सीमान्त अनुसूचित जनजाति सेवा संस्थान'' द्वारा संचालित 'राजी आवासीय विद्यालय जौलजीवी'' मे रसोईया का कार्य कर रही हैं। किमखोला गाँव का ही एक व्यक्ति रतन सिंह भी इसी विद्यालय में चौकीदार के पद पर कार्यरत है। इसके अतिरिक्त राजी अपने घरों में राम–बाँस की रस्सीयाँ, टोकरियाँ आदि बनाकर बेचती हैं। सरकार द्वारा भी काष्ठ कला का प्रशिक्षण देकर राजीयों को आत्मनिर्भर एवं आर्थिक रूप से मजबूत बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

निश्कर्श– राजी जनजाति प्रारम्भ से ही जंगली एवं गुफावासी जीवन व्यतीत करते हुए जंगली कन्दमूल फल खाकर अपना पेट भरती थी। इनको वाह्य समाज का कोई ज्ञान नहीं था। जिससे इनका सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन विकसित नहीं हो पाया। ऐसी स्थिति में भारत सरकार ने वर्ष 1967 में इन्हें अनुसूचित जनजाति का दर्जा देकर इन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का कार्य किया। इनके लिए अनेक विकास योजनायें बनाकर जागरूक करने का कार्य किया। आज राजी जनजाति के लोग सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जीवन शैली से जुड़ कर आगे बढ़ रही है। विभिन्न सरकारी योजनाओं का लाभ उठाकर राष्ट्र की मुख्य धारा की ओर अग्रसर है।

सन्दर्भ सूचीः–

1. मजूमदार डी0एन0 : रेसेज एण्ड कल्चर ऑफ इण्डिया पृष्ठ– 371
2. बिष्ट वी0एस0 : उत्तरांचल– पिछड़ी जाति एवं जनजाति परिदृश्य पृष्ठ– 134
3. डबराल शिव प्रसाद : उत्तराखण्ड का इतिहास, भाग–2 पृष्ठ– 65
4. शेरिग सी0ए0 : वैस्टर्न तिब्बत एण्ड ब्रिटिस वाण्डर लैण्ड – 1906 पृष्ठ– 145
5. सांकृत्यायन राहुल : कुमाऊँ पृष्ठ– 105
6. बिष्ट वी0एस0 : उत्तरांचल– पिछड़ी जाति एवं जनजाति परिदृश्य पृष्ठ– 133
7. बिष्ट वी0एस0 : उत्तरांचल– पिछड़ी जाति एवं जनजाति परिदृश्य पृष्ठ– 66
8. जोशी प्रयाग : वनराजियों की खोज में पृष्ठ– 85
9. नौटियाल शिवानन्द : उत्तराखण्ड की जनजातियाँ पृष्ठ– 44
10. उपाध्याय देवेन्द्र : उत्तराखण्ड के आदिवासी पृष्ठ– 48
11. डोभाल दीपक कुमार : उत्तराखण्ड की जनजातियाँ (ऐतिहासिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक सन्दर्भ में), वर्ष 2003 पृष्ठ– 135
12. पोखरिया देव सिंह : कुमाऊँ हिमालय की राजी जनजाति का समाजशास्त्रीय एवं भाषा वैज्ञानिक अध्ययन पृष्ठ– 45
13. बिष्ट वी0एस0 : ए राजी ट्राइव ऑफ इण्डो–नेपाल वार्डर ऑफ उत्तराखण्ड– वर्ष 1993 पृष्ठ– 120